दलित लेखन : इतिहास की पुनर्व्याख्या

शैलेन्द्र चौहान

34/242, सेक्टर-3, प्रतापनगर, जयपुर-302033
shailendrachauhan@hotmail.com

यह समाज आदिकाल से ही वर्ण व्यवस्था द्वारा नियंत्रित रहा है। जो वर्ण व्यवस्था प्रारंभ में कर्म पर आधारित थी कालान्तर में जाति में परिवर्तित हो गई। वर्ण ने जाति का रूप कैसे धारण कर लिया ? यही विचारणीय प्रश्न है। वर्ण व्यवस्था में गुण व कर्म के आधार पर वर्ण परिवर्तन का प्रावधान था किन्तु जाति के बंधन ने उसे एक ही वर्ण या वर्ग में रहने पर मजबूर कर दिया। अब जन्म से ही व्यक्ति जाति से पहचाना जाने लगा। उसके व्यवसाय को भी जाति से जोड़ दिया गया। अब जाति व्यक्ति से हमेशा के लिए चिपक गई और उसी जाति के आधार पर उसे सवर्ण या शूद्र, उच्च या निम्न माना जाने लगा। शूद्रों को अस्पृश्य और अछूत माना जाने लगा और इतना ही नहीं उन्हें वेदों के अध्ययन, पठन - पाठन, यज्ञ आदि करने से वंचित कर दिया गया। उच्च वर्ग ने अपना वर्चस्व बनाये रखने के लिए सबसे बड़ी चालाकी यह की, कि ज्ञान व शिक्षा के अधिकार को उनसे छीन लिया और उन्हें अज्ञान के अंधकार में झोंक दिया। जिससे वे आज तक जूझ रहे हैं और उभर नहीं पा रहे हैं।

भारतीय समाज में दलित वर्ग के लिए अनेक शब्द प्रयोग में लाये जाते रहे है जैसे - शूद्र, अछूत, बहिष्कृत, अंत्यज, पददलित, दास, दस्यु, अस्पृश्य, हरिजन, चांडाल आदि। दलित शब्द का शब्दिक अर्थ है - मसला हुआ, रोंदा या कुचला हुआ, नष्ट किया हुआ, दरिद्र और पीड़ित, दलित वर्ग का व्यक्ति। विभिन्न विचारकों ने दलित शब्द को अपने-अपने ढंग से परिभाषित किया है। डॉ. एनीबीसेन्ट ने दरिद्र और पीडितों के लिए 'डिप्रैस्ड' शब्द का प्रयोग किया है। दलित पैंथर्स के घोषणा पत्र में अनुसूचित जाति, बौद्ध, कामगार, भूमिहीन, मजदूर, गरीब-किसान, खानाबदोश जाति, आदिवासी और नारी समाज को दलित कहा गया है। मानव समाज में हर वह व्यक्ति या वर्ग दलित है जो कि किसी भी तरह के शोषण व अत्याचार का शिकार है। सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनैतिक, धार्मिक या आर्थिक या फिर अन्य मानवीय अधिकारो से वंचित, वह वर्ग जिसे न्याय नही मिल सका, दलित है। किसी भी दमित, पीड़ित या वंचित समुदाय या वर्ग के बारे में लिखे गए उपन्यास, लघुकथाएं, कविताएं, जीवनियां और आत्मकथाएं प्रासंगिक और महत्वपूर्ण हैं फिर चाहे वे दलित शब्द की पारंपरिक परिभाषा के अनुसार दलित साहित्य की श्रेणी में आती हों या नहीं।

कुछ मराठी लेखकों की आत्सामकथाएं सामाजिक-ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। इनमें से एक आत्मकथा का शीर्षक है 'उपारा' (बाहरी व्यक्ति) (1980) जो मराठी में लक्ष्मण माने द्वारा लिखी गई थी। यह कृति केकाड़ी समुदाय के बारे में है। यह समुदाय महाराष्ट्र में एसईडीबीसी की सूची में शामिल है। यह एक ऐसा समुदाय है जिसे औपनिवेशिक काल में आपराधिक जनजाति अधिनियम 1871 के तहत आपराधिक जनजाति करार दिया गया था। केकाड़ी, आंध्र प्रदेश के येरूकुला के समकक्ष हैं, जिन्हें पूर्व में 'दमित जातियों' की सूची में शामिल किया गया था और बाद में एसटी का दर्जा दे दिया गया। ये दोनों कर्नाटक के कोराचा, जो एससी की सूची में हैं और तमिलनाडु के कोरावा के समकक्ष हैं। कोरावा के कुछ तबकों को एसटी और कुछ को पिछड़ी जातियों में शामिल किया गया है। अलग-अलग राज्यों में उन्हें जो भी दर्जा दिया गया हो, परंतु इसमें कोई संदेह नहीं कि केकाड़ी समुदाय, समाज के सबसे निचले पायदान पर है और उनके जीवन के बारे में लिखे गए साहित्य को 'दलित साहित्य' कहा ही जाना चाहिए, अपितु ऊपर बताए गए स्पष्टीकरण के साथ। प्रसिद्ध लेखिका महाश्वेता देवी ने लोदा और साबर नामक एसटी समुदायों पर केन्द्रित कृतियां रची हैं। दरअसल, 'दलित' शब्द का इस्तेमाल करने वाले व्यक्ति को यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह इसका इस्तेमाल किस संदर्भ में कर रहा है। सामान्यतः इस शब्द का इस्तेमाल अनुसूचित जाति के लिए किया जाता है अर्थात उन जातियों के लिए जो अछूत प्रथा की शिकार थीं। जब कोई व्यक्ति इस शब्द का इस्तेमाल अधिक व्यापक अर्थ में करता है तब उसे यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह इसका इस्तेमाल किस संदर्भ में कर रहा है ताकि किसी भी प्रकार की गलतफहमी से बचा जा सके।

दलित साहित्य का सामान्य अर्थ होता है वह साहित्य जो दलित समुदायों के बारे में हो। इसका सबसे प्राचीन उदाहरण है इड़िवा नामक एसईडीबीसी जाति के पोथेरी कुनहंबू द्वारा सन् 1892 में मलयालम में लिखा गया सरस्वतीविजयम्। यह एक ऐसे दलित लड़के की कहानी है जिसके साथ एक ब्राह्मण उसके द्वारा संस्कृत श्लोक उच्चारित करने के 'अपराध' में दुर्व्यवहार करता है। बाद में यह लड़का शिक्षा प्राप्त कर जज बनता है। एक अन्य पुराना उदाहरण है मल्लापल्ले (1922 में प्रकाशित)। मल्लापल्ले का अर्थ है – माला लोगों का निवास स्थान। माला, आंध्र प्रदेश की दो प्रमुख एससी जातियों में से एक है। इसके लेखक उन्नावा लक्ष्मीनारायणा (1877-1958) एक ऊँची जाति से थे। दो मार्मिक कृतियां जो हाथ से मैला साफ करने की प्रथा और उस समुदाय के चरित्रों को चित्रित करती हैं, वे हैं थोटियुडे माकन (जिसका अर्थ है मेहतर का लड़का) और थोट्टी (जिसका अर्थ है मेहतर)। इन दोनों कृतियों के लेखक क्रमश: थकाजी शिवशंकर पिल्लई (जो अपने उपन्यास चेमेन के लिए अधिक जाने जाते हैं और

जिस पर फिल्म भी बनाई जा चुकी है) और नागवल्ली आरएस कुरू थे। ये दोनों कृतियां सन् 1947 में प्रकाशित हुईं थीं यद्यपि यह दिलचस्प है कि 'मेहतर का पुत्र', 'मेहतर' के पूर्व प्रकाशित हुआ था। कुमारन आसन की दुरावस्था व चंडाल भिक्षुकी भी दलित समुदायों के बारे में हैं। कुमारन आसन स्वयं इड़िवा समुदाय के थे। उस समय इड़िवाओं को भी 'अछूत' माना जाता था यद्यपि वे इस प्रथा से उतने पीड़ित नहीं थे जितने कि दलित। अगर 'दलित' शब्द का इस्तेमाल किसी संदर्भ में व्यापक अर्थ में किया जाता है तो इस शब्द का प्रयोग करने वाले व्यक्ति को यह स्पष्ट करना चाहिए और तब निश्चित तौर पर 'दलित साहित्य' को हम ऐसे साहित्य के रूप में परिभाषित कर सकते हैं, जो किसी भी दमित या वंचित समुदाय के संबंध में हो।

दलित शब्द का उपयोग अलग-अलग संदर्भों में अलग-अलग अर्थों में किया जाता रहा है। अक्सर इस शब्द का प्रयोग एससी के संदर्भ में किया जाता है। कभी-कभी इसमें एससी और एसटी दोनों को सम्मिलित कर दिया जाता है। कुछ अन्य मौकों पर और अन्य संदर्भों में, इस शब्द का इस्तेमाल एससी, एसटी व एसईडीबीसी तीनों के लिए संयुक्त रूप से किया जाता है। कभी-कभी इन तीनों के लिए 'बहुजन' शब्द का इस्तेमाल भी होता है। 'दलित' का शाब्दिक अर्थ है दमित, पीड़ित या रौंदा हुआ। स्वामी विवेकानंद ने उन समुदायों, जो अछूत प्रथा के शिकार थे, के लिए 'सप्रेस्ड क्लासेज' शब्द का प्रयोग किया है। गांधीजी ने भी इस शब्द को स्वीकार किया और यह कहा कि वे निःसंदेह 'सप्रेस्ड' (दमित) हैं। आगे चलकर उन्होंने इन वर्गों के लिए 'हरिजन' शब्द गढ़ा और उसका प्रयोग करना शुरू किया। स्वामी विवेकानंद द्वारा इस्तेमाल किए गए 'सप्रेस्ड' शब्द को स्वामी श्रद्धानंद ने हिन्दी में 'दलित' के रूप में अनुदित किया। स्वामी श्रद्धानंद के अछूत जातियों के प्रति दृष्टिकोण और उनकी सेवा करने के प्रति उनकी सत्यनिष्ठा को डॉ. आंबेडकर और गांधीजी दोनों ने स्वीकार किया और उसकी प्रशंसा की। गांधीजी और आंबेडकर में कई मतभेद थे, परंतु स्वामी श्रद्धानंद के मामले में दोनों एकमत थे।

हिंदी दलित साहित्य में ओमप्रकाश वाल्मीकि की आत्मकथा 'जूठन' ने अपना एक विशिष्ट स्थान बनाया है। इस पुस्तक ने दलित, गैर-दलित पाठकों, आलोचकों के बीच जो लोकप्रियता अर्जित की है, वह उल्लेखनीय है। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भी दलितों को शिक्षा प्राप्त करने के लिए जो एक लंबा संघर्ष करना पड़ा, 'जूठन' इसे गंभीरता से उठाती है। प्रस्तुति और भाषा के स्तर पर यह रचना पाठकों के अन्तर्मन को झकझोर देती है। भारतीय जीवन में रची-बसी जाति–व्यवस्था के सवाल को इस रचना में गहरे सरोकारों के साथ उठाया गया है। 'जूठन' भारत के पश्चिमी उत्तर-प्रदेश की ब्राह्मणवादी, सामंती मानसिकता के उत्पीड़न की अभिव्यक्ति है तो 'मुर्दहिया' (तुलसी राम) पूर्वी उत्तर प्रदेश के ग्रामीण अंचल

में शिक्षा के लिए जूझते एक दलित की मार्मिक अभिव्यक्ति जहां सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक विसंगतियां क़दम–क़दम पर दलित का रास्ता रोक कर खड़ी हो जाती है और उसके भीतर हीनताबोध पैदा करने के तमाम षड्यंत्र रचती है। लेकिन एक दलित संघर्ष करते हुए इन तमाम विसंगतियों से अपने आत्मविश्वास के बल पर बाहर आता है और जेएनयू जैसे विश्वविद्यालय में विदेशी भाषा का विद्वान बनता है। दलित कहानियों में सामाजिक परिवेशगत पीड़ाएं, शोषण के विविध आयाम खुल कर और तर्क संगत रूप से अभिव्यक्त हुए हैं। ग्रामीण जीवन में अशिक्षित दलित का जो शोषण होता रहा है, वह किसी भी देश और समाज के लिए गहरी शर्मिंदगी का सबब होना चाहिए था। 'पच्चीस चौका डेढ़ सौ' (ओमप्रकाश वाल्मीकि) कहानी में इसी तरह के शोषण को जब पाठक पढ़ता है, तो वह समाज में व्याप्त शोषण की संस्कृति के प्रति गहरी निराशा से भर उठता है। 'अपना गाँव' मोहनदास नैमिशराय की एक महत्त्वपूर्ण कहानी है जो दलित मुक्ति-संघर्ष आंदोलन की आंतरिक वेदना से पाठकों को रूबरू कराती है। दलित साहित्य की यह विशिष्ट कहानी है। दलितों में स्वाभिमान और आत्मविश्वास जगाने की भाव भूमि तैयार करती है। इसीलिए यह विशिष्ट कहानी बन कर पाठकों की संवेदना से दलित समस्या को जोड़ती है। दलितों के भीतर हज़ारों साल के उत्पीड़न ने जो आक्रोश जगाया है वह इस कहानी में स्वाभाविक रूप से अभिव्यक्त होता है। कौशल्या वैसन्त्री की आत्मकथा 'दोहरा अभिशाप' हिन्दी दलित साहित्य की पहली महिला आत्मकथा मानी जाती है। कौशल्या वैसन्त्री अपने जीवन की एक–एक पर्त को जिस तरह उघाड़ कर पाठकों के सामने रखती हैं वह एक साहस का काम है। इस आत्मकथा की एक विशिष्टता है उसकी भाषा, जो जीवन की गंभीर और कटू अनुभूतियों को तटस्थता के साथ अभिव्यक्त करती है। एक दलित स्त्री को दोहरे अभिशाप से गुज़रना पड़ता है- एक उसका स्त्री होना और दूसरा दलित होना।

दलित चिंतकों ने इतिहास की पुनर्व्याख्या करने की कोशिश की है। इनके अनुसार गलत इतिहास - बोध के कारण लोगों ने दलितों और स्त्रियों को इतिहास - हीन मान लिया है, जबकि भारत के इतिहास में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण है दलित चिंतकों ने इतिहास की पुनर्व्याख्या करने की कोशिश की है। इनके अनुसार गलत इतिहास - बोध के कारण लोगों ने दलितों और स्त्रियों को इतिहास - हीन मान लिया है, जबकि भारत के इतिहास में उनकी भूमिका महत्वपूर्ण है। वे इतिहासवान है। सिर्फ जरूरत दलितों और स्त्रियों द्वारा अपने इतिहास को खोजने की है। वे इतिहासवान है। सिर्फ जरूरत दलितों और स्त्रियों द्वारा अपने इतिहास को खोजने की है।